Pratidhwani the Echo
A Peer-Reviewed International Journal of Humanities & Social Science
ISSN: 2278-5264 (Online) 2321-9319 (Print)
UGC Enlisted Serial No. 48666
***Impact Factor: 6.28** (Index Copernicus International)*
Volume-VII, Issue-I, July 2018, Page No. 301-308
Published by Dept. of Bengali, Karimganj College, Karimganj, Assam, India
Website: http://www.thecho.in

कृष्णा सोबती के उपन्यास गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान में अभिव्यक्त राष्ट्रीय चेतना

Dr Madhuchanda Chakrabarty
Assistant Professor, Department of Hindi, Mount Carmel College, Autonomous, Bangalore

Abstract

Krishna Sobti is a potential writer of modern Hindi literature. The nation and feeling for nation is not only a topic for literature, but it is like any other feeling which is inside the heart which can't be separated from any human being. The nation in which the person has lived with is geographical boundaries, social-cultural-political environment, if suddenly it is divided for some reason what would be the situation, Krishna Sobti has shown very well in her novel. She have shown how the people of the same country react when it divided into two parts, how the same people living in the same area with their boundaries and make alien others who are coming into their boundaries. How suddenly are the people of the same nation, not only from the caste culture, but on the basis of regionalism are divided? This partition becomes a barrier to the country's interest. Showing humiliation to the people who take shelter under the guise of compassion is the first symptom of the collapse of human values in a way and also staying in the same country, behaving differently with each other on the basis of regionalism etc. All the problems are not right in the country's interest, all the thing has been tried to show in this new novel of Krishna Sobti. Through all this, Krishna Sobti wants to say that when there is a country, then why not everyone has the same mind for the country's interest.

कृष्णा सोबती हिन्दी जगत की एक सशक्त रचनाकार हैं। इनका जन्म 18 फरवरी 1925 में गुजरात (अब पाकिस्तान में) में हुआ था। उन्होंने अपने जीवन में भारत की स्वतंत्रता तथा उस समय हिन्दुस्तान तथा पाकिस्तान के गाँव में रहने वाले लोगों का एक स्थान से दूसरे स्थान में विस्थापन आदि को देखा। अतःउनकी रचनाओं में हम विस्थापन का दुख तथा नए स्वतंत्र राष्ट्र के निर्माण में आने वाली तत्कालीन समस्याओं का चित्रण स्पष्ट रूप से देख पाते हैं। इसके अलावा उनकी रचनाओं में स्त्री विमर्श मुख्य रूप से विराजमान है, सामाजिक समस्याएँ तथा अन्य कई गम्भीर विषयों का भी चित्रण मिलता है। उन्होंने कई उपन्यास एवं कहानियाँ लिखी है जिसमें प्रमुख हैं दिलो दानिश, ज़िन्दगीनामा, सूरजमुखी अंधेरे के, मित्रो मरजानी, सिक्का बदल गया, मेरी माँ कहाँ, बादलों के घेरे में, दादी-अम्मा, गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान आदि। इसमें **सिक्का बदल गया** तथा **गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान** में विभाजन की

त्रासदि का दुख अभिव्यक्त हुआ है। विभाजन की त्रासदि का दुख अभिव्यक्त करने के पीछे कारण ही यही रहा है कि जिस समय वह जिस भूमि में जन्मी थी वह देश तब अखण्ड था औक विदेशी सत्ता के आधीन था और उसे आज़ाद करने के लिए तब हज़ारों-लाखों लोगों ने कुर्बानियाँ दी। जब वही देश आज़ाद हुआ तो आज़ादी के तोहफे में बँटवारा मिला। बँटवारे की विभत्सता को, उसके ज़ख्मों को ढोते लोगों के दुख को उन्होंने अपनी रचनाओं में स्थान दिया है। नए आज़ाद भारत में तब भी पुरानी सियासती चाले चली जा रही थी। एक तरफ भारत सरकार राज्यों को एक जुट कर स्वतंत्र गणतंत्र की स्थापना में लगी थी, राज-पाट को समाप्त कर रही थी तो वही कुछ राज-परिवार इसे स्वीकार नहीं कर पा रहे थे। देश के निर्माण तथा उसके नवीन दिशा की ओर बढ़ने में यह एक गंभीर समस्या थी जिसे कृष्णा सोबती ने अपने उपन्यास में अभिव्यक्त किया है। यही राष्ट्र के प्रति चेतना को दर्शाता है।

राष्ट्रीय चेतना का अर्थ क्या है। राष्ट्र के प्रति संवेदना, राष्ट्र के हित की कामना, राष्ट्र के कल्याण के लिए जो जरूरी हो वही करना। साहित्य में राष्ट्रीय चेतना का अर्थ यही है जिसमें लेखक अथवा लेखिका राष्ट्र के प्रति जो भी सद्भावना रखते हैं उन सभी भावनाओं की अभिव्यक्ति वहाँ होती है। यह भावना हर हाल में बनी रहती है। विडम्बना की बात यह है कि भारत की आज़ादी से पहले ऐसे कई लेखक थे जिनकी रचनाओं में देश भक्ति कूट-कूट कर भरी थी, इसने समाज को बहुत बल दिया था तत्कालीन विदेशी सत्ता से लोहा लेने के लिए। फिर भी 1947 में देश आज़ाद होने के वाबजूद भी धर्म तथा जातिगत भेदभाव का गुलाम बना रहा जिसके फलस्वरूप उसका विभाजन हो गया और दो देश बन गया। एक भारत दूसरा पाकिस्तान । अपनी धरती, अपना गांव, सब कुछ छोड़ कर लोगों के एक स्थान से दूसरे स्थान जाना पड़ा जिसे विस्थापन कहते हैं और उन लोगों को शरणार्थी। भले ही लोग एक ही धर्म के थे पर दूसरे देश से आए थे इसलिए वे पराए हो गए थे। जिस तरहा से उस समय लोग हिन्दु और मुसलिम के नाम पर एक दूसरे से लड़ रहे थे, वही समानांतर रूप से दोनों ही मुल्कों में पाकिस्तानी हिन्दु और हिन्दुस्तानी हिन्दु, पाकिस्तानी मुसलिम और हिन्दुस्तानी मुसलिम जैसी भावना भी पैदा हो गयी थी। जब देश एक था तो धर्म के नाम पर लोग बटे हुए थे लेकिन जब देश अलग हुआ तो धर्म भले ही एक हो वह दो देशों में बट गया और लोगों में दूरियाँ आ गयी। इसका कारण यह है कि **समान धर्म आकर्षण उत्पन्न करता है। किन्तु आत्मीयता होने के लिए समीपता आवश्यक है। समीपता साथ रहने से होती है। दूरस्थ देश से आया समान धर्मी चूकि समीपस्थ नहीं है इसलिए उसके साथ वह अनुराग उत्पन्न नहीं हो पाता है जो होना चाहिए। इसलिए समान धर्मी होना ये बहुत बड़ा कारण नहीं है, ये केवल आकर्षण मात्र उत्पन्न करता है**। यही कारण है कि उस समय पाकिस्तान से आए हिन्दु शरणार्थीयों के प्रति भारतीयों के मन में एक प्रकार का हीन मनोभावना दिखायी दे रही थी तथा वे उन लोगों को मजबूरन अपने यहाँ शरण दे रहे थे तथा मदद कर रहे थे परन्तु उनमें किसी भी प्रकार से आत्मीयता की भावना नहीं थी। तत्कालीन राजनेताओं ने केवल अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए, कुर्सी के मोह के लिए देश को धर्म के आधार पर बांट दिया। वे लोगों को यह दर्शाते रहे कि उन्हें देश हित की चिन्ता है परन्तु वास्तव में उनका देश हित से कोई लेना देना नहीं था। किसी भी देश के निर्माण में तथा उसके विकास में इस प्रकार की स्वार्थपरक भावनाएं बाधा उत्पन्न करती है, वही लोगों में धर्म तथा स्थान के आधार पर अलगाव भी समाज को एक सूत्र में बंधे रहने नहीं देता। तत्कालीन नेताओं ने उपरोक्त बात को नहीं समझा तथा अपनी अदूरदर्शीता दिखायी। सरदार पटेल ने फिर भी बहुत कोशिश की कि पूरा देश एक जुट हो सके परन्तु पटेल-नेहरू के बीच में द्वन्द्व में देश हित पानी में

बह गया। कृष्णा सोबती ने अपने उपन्यास गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान में इन्हीं सारी समस्याओं को अभिव्यक्त किया है।

कहानी यू है कि बंटवारे के बाद वे अपने परिवार के साथ दिल्ली आती है। वहाँ राजस्थान सिरोही में शिशुशाला में नौकरी के लिए आवेदन पत्र देती है जिससे उन्हें सिरोही बुला लिया जाता है। किसी कारण से शिशुशाला के खुलने में देरी होती है तब तक वे सिरोही के महाराज तेजसिंह की गवर्नेस का पद सम्भालती है। कहानी में विभाजन की त्रासदी तथा शरणार्थियों के कठीन जीवन तथा भेदभाव आदि के साथ-साथ सिरोही राजघराने में हो रही साजिशों तथा हलचलों को बहुत करीब से दिखाया गया है। रियासतो का विलय उस समय होने लगा था तथा उसे कुछ राजघराने पचा नहीं पा रहे थे। आज़ाद हुए देश में भी राजघरानों के राज को कायम रखने की पुरजोर कोशिश आदि को भी इस उपन्यास में अभिव्यक्त किया गया है। कृष्णा सोबती स्वयं उपन्यास में एक पात्र है। कृष्णा सोबती ने जिन समस्याओं को चित्रण किया है जिसे हम मुख्यतः चार रूप से विभाजित करके देख सकते हैं। **पहला विभाजन की त्रासदी का, दूसरा शरणार्थियों की समस्याओं का, तीसरा विलय होते राजघरानों में राजसत्ता को बचाने की होड़ का तथा तत्कालीन समाज में रह रहे लोगों की पिछड़ी सोच का**। विभाजन की त्रासदी का चित्रण हम उनके उपन्यासों में जगह-जगह देख पाते हैं जब कृष्णा सोबती दिल्ली से सिरोही पहुँचती है तो उन्हें सबकुछ नया और पराया सा लगने लगता है। वे अभी तक अपने स्थान से बिछड़ने के दुख को पूरी तरहा से समेटा नहीं पायी है तथा आज़ाद भारत में भी अपने-आप को पूरी तरहा से महसूस नहीं कर पा रही है। बार-बार उन्हें पाकिस्तान में छूट गए अपने शहर की याद आ रही है जिसे वे किसी तरहा से जब्त किए हुए है ----उसने माथे को छूकर देखा, कहीं उल्लू की आँखें उसके माथे पर तो नहीं आ लगीं। पुरानी यादों पर किवाड़ भिड़ा दो। अब वहाँ हमारे लिए कुछ नहीं है। हम उस भूगोल, इतिहास के बाहर हो चुके है।[1] उसी प्रकार वे विभाजन के समय हो रहे मार-काट का दृश्य भी इसी प्रकार अभिव्यक्त करती हैं जिसमें उनके एक चचा छूट गए थे – छोटे चचा बलराज वहीं छूट गए थे। दर्द से उनकी टाँग जुड़ी थी। फार्म पर रखी बन्दूक उनके किसी काम न आ सकी। भीड़ फार्म की ओर बढ़ रही है। खबर पा मौलू ने चचा को चबारे से उतारा। बोरी में डाल अपने कंधे पर उठा लिया। सिर को खेस से ढँक अपनी झुग्गी में डाल आया। घरवाली चूल्हे के आगे बैठी रोटी-सालन पकाती रही और मौलू भीड़ के साथ लूट-मार में शामिल रहा। रात देर गए जब भीड़ तितर-बितर हो गई तो मौलू ने चचा का बोरा-बुचका कंधे पर डाला और खेतों के बीच से होकर रोढ़ी साहिब जा पहूँचा।[2] इस घटना से यह साबित हो जाता है कि उस समय सर्व-साधारण लोग भले ही अलग-अलग धर्म के मानने वाले हो लेकिन साथ रहने के कारण इतनी आत्मीयता हो गयी थी कि वे एक-दूसरे को बचा रहे थे। तथा जिन्में धार्मिक कट्टरपंथ का ज़हर घोल दिया गया था वे उस वक्त अपने ही पास-पड़ोसियों को मारने-काटने में लगे हुए थे। कुछ अलगाववादी सत्ताधारियों के कारण कई लाखों लोगों की ज़िन्दगियाँ तबाह हो गयी थी। देश के बंटवारे को उस समय की जनता ने बिलकुल भी स्वीकार नहीं किया था। विशेषकर उन लोगों ने जो तब देश की सीमान्त में रह रहे थे तथा उन्हें बंटवारे के समय सबसे अधिक नुकसान झेलना पड़ा और जो आज़ादी पाकर भी अपनो को इस प्रकार से खो देने का गम बर्दाश्त नहीं कर पा रहे थे। बिम्बो की माँ के दुखड़े का चित्रण करते हुए उन्होंने विस्थापित हुए लोगों के दुख तथा क्रोध को कुछ यों प्रस्तुत किया है ---बिम्बो की माँ आगमन। रोने-करलाने की आवाजें एक-एक को दहला गईं। छाती पीट-पीटकर नेहरू, जिन्ना को गालियाँ देती ने सबको डाँवाडोल कर दिया था। अरे सरकार

वालो-कुर्सियोंवालो, तुम्हारी भी वहीं जाए जहाँ हमारी पली-पलाई सजरी परणाई बेटी गई है। अरे खलकत को बचाने के लिए तुम्हारे पास पुलिस-फौज नहीं थी तो क्यों बँटवारा माना था। बापू गांधी, तुम क्यों चुप हो? जिस नेहरू को तुमने अपना पुत्र बनाया, उससे अपना हुक्म क्यों न मनवाया![3] वास्तव में देश के बंटवारे को उस समय कोई भी नहीं समझ पा रहा था न ही सहन कर पा रहा था। क्योंकि जिन लोगों के सामने ये नेता देशहित की बात कर रहे थे, स्वराज की बात कर रहे थे, वास्तव में उन्होंने जनता को कैसा स्वराज दिया, कैसी आज़ादी दी जिसमें लोगों के घर-बार, खेत-खलिहान, व्यवसाय, रिश्ते-नाते सब स्वाहा हो गए? उस समय लोगों ने मन में यह प्रश्न चोट कर रहा था, उन्हें कष्ट पहुँचा रहा था। इसीलिए वे नेहरू-गांधी, जिन्ना को गालियाँ दे रहे थे। वास्तव में ये नेता केवल और केवल अपनी राजनीति चमका रहे थे। उन्हें स्वराज की चिन्ता नहीं थी, स्वराज का लालच केवल मासूम जनता को दिखाना था ताकि लोग उन्हें अपना नेता मानकर चले। नेतागिरि ही उनका वास्तविक रूप था। इसी प्रकार उपन्यास में कई और ऐसे दृश्य है जिनमें साधारण जनता का विभाजन के विरुद्ध आक्रोश उमड़ता हुआ चित्रित किया गया है।

इसी प्रकार आज़ाद भारत को शरणार्थियों की भीड़ का भी सामना करना पड़ा। उसने पुनर्वास तथा आर्थिक रूप से सक्षम करने की आवश्यकता भी उस समय थी क्योंकि जिस भरोसे वह अपने घर-बार छोड़कर आए थे उनके लिए आवश्यक हो गया था कि उनको हिन्दुस्तान में बसाना। दूसरी बात यह भी है कि यदि इन्हें देश में नहीं बसाया जाता, या इनकी स्थानीय अन्य निवासियों ने मदद न की होती तो फिर ये देश के लिए बोझ की तरहा पड़े रहते। फिर भी पाकिस्तान से आए शरणार्थियों की कई सारी समस्याएँ हल नहीं हुई, उन्हें किसी-न-किसी रूप से पराएपन तथा लाचार होने का एहसास कराया जा रहा था। कृष्णा सोबती लिखती है --- शरणार्थी – एक विशेषण। लुटा-पुटा गरीब। कैम्पों में रहनेवाला। विस्थापितों को राशत मुफ्त मिल सकता है। फार्म भरा होना चाहिए तो कम्बल के भी हकदार हो सकते हैं! वह क्यों इस पर सोच रही है? इसका न बुरा मनाया जा सकता है, न सराहा जा सकता है। यह तो एक स्थिति है। अपनी जड़ों से उखड़ने की। नई जगहों पर जमने की।[4] मुफ्त का राशन और कम्बल आखिर कब तक दिया जा सकता है? इससे देश पर अतिरिक्त बोझ बढ़ेगा। फिर भी शरणार्थियों ने तब मुफ्त के राशन-कम्बल के अलावा भी अपने आप को सम्भालने की कोशिश की। नौकरी तथा अन्य रोजगार के साधन जुटाने शुरू किए ताकि उन्हें मुफ्त के राशन लेने वाले की संज्ञा से मुक्ति मिल सके। इसमें से कृष्णा सोबती एक थी जो शिशुशाला में काम तलाशती है। जब वे इस नौकरी के लिए सिरोही जाती है तो वहाँ उन्हें एक और दावेदार मिलता है। उसे वहाँ के स्थानीय नेता ने चुन रखा था। लेकिन जब कृष्णा सोबती शिशुशाला के लिए ज्वाइनिंग रिपोर्ट दे दी तो दफ्तर में हलचल मच गयी। बातें होने लगी जिसे कृष्णा सोबती ने इस प्रकार से अभिव्यक्त किया है –असल बात यह कि वह दिन ही उथल-पुथल का था। सिरोही राज में उस दिन एक साथ दो फोर्स-लैंडिंग हुए थे। एक डकोटा जहाज------ दूसरी लैंडिंग थी – शिशुशाला की निर्देशिका की। लौट जाने का मन बनाकर स्टेशन की बस पकड़ने की जगह सुबह-सुबह तहसील ऑफिस पहुँच गई अपनी ज्वाइनिंग रिपोर्ट देने। शरणार्थियों से भगवान बचाए। लुटे-पुटे जब तक सरकार को लूट-खसोट न लेंगे, इन्हें चैन न आएगा।[5] शरणार्थी होना जैसे एक प्रकार से उस वक्त उन निर्दोश लोगों का गुनाह सा बन गया था। दूसरी बात यह कि अभी तक पूरी दुनिया यह नहीं समझ पायी है कि वह वास्तव में धार्मिक आधार पर ही बटी हुई है। और यह सौ प्रतिशत सच बात है कि भारत और नेपाल के अलावा

उसके पड़ोसी देश में हिन्दुओं के साथ वास्तव में ही बहुत ज्यादा अत्याचार हो रहे है। ऐसे में ये लोग कहा जाए, किससे मदद मांगे? देश के बंटवारे के बाद जब पाकिस्तान में दंगे होने लगे तो क्या इन लोगों को मर जाना चाहिए था या फिर अपना बचाव करना चाहिए था? क्या इन लोगों को जीवन का कोई अधिकार नहीं? भारत की सर्व धर्म समभाव वाली भावना के लिए उस वक्त यह प्रश्न चुनौति बनकर खड़ी थी। उस समय कुछेक स्थानीय निवासियों ने इन शरणार्थियों की बहुत मदद की। शरणार्थियों में भी तब तक यह भावना आ चुकी थी कि जो हुआ सो हुआ अब अपने आप को सम्भाल लेने में ही भलाई है। स्वयं कृष्णा सोबती के ही मन में यह बात आती है कि जो कुछ भी इस हल्ले में से बच गया है उसे नष्ट होने से क्यों न बचाया जाए! जो-जो उस खून-खराबे से बच निकले हैं, वे क्यों न दूसरों के लिए अपने को सँभालें।[6] ठीक यही भावना स्थानीय निवासियों में भी थी क्योंकि किसी को शरण में लेकर उसे खिलाते-पिलाते रहने के दायित्व से ज्यादा अच्छा है कि उसे भी इतना सक्षम बना दिया जाए कि वह स्वयं अपने भूख-प्यास की जरूरतों को पूरा कर सके। कृष्णा सोबती ने इस प्रकार के एक प्रसंग व्यक्त किया है, जब वे शिशुशाला के लिए बम्बई में अपरेटस लेने जाती है तो अहमदाबाद में अपनी शान्ति मौसी के यहाँ रुकती है तो वह बताती है कि कैसे विस्थापितों के लिए कुछ स्थानीय सेठों ने मदद कि थी --- स्टोव पर पानी रखते हुए बोली – मुकुल साहिब की वजह से ही हमारे सिर पर यह छत है। यहाँ आए सभी शरणार्थियों के लिए सेठों ने गद्दे-लिहाफ बनवा दिए। साथ दिए छोटे-बड़े तौलिए और काठियावाड़ी छपाई के थान। सबने मिलकर मदद की तो आज यहाँ बैठे हैं।[7] ऐसी मानवतावादी सोच के कारण आज भी भारत पूरे विश्व में सम्मान का पात्र है। हाँ यह बात भी सही है कि जिस देश में संसाधनों की कमी हो वहाँ शरणार्थियों के लिए भी सुविधाएँ, आवास, नौकरी आदि की व्यवस्था करना एक अतिरिक्त बोझ के सिवा कुछ नहीं है। लेकिन देश के बंटवारे के समय इस प्रकार की कोई परिस्थिति नहीं थी। अभी-अभी देश आज़ाद ही हुआ था, उस समय देश के सभी लोगों के बीच एक-जुटता होना आवश्यक था तथा विस्थापितों को भी अपने-आप के सम्भालने का प्रयास करना भी जरूरी था ताकि भविष्य को ओर देश बढ़ सके। परन्तु जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि विस्थापितों के साथ उस समय अधिकांश नेता तथा कुछ लोग आत्मीयता स्थापित नहीं कर पा रहे थे। यह केवल समान धर्म का आकर्षण मात्र था जो उन लोगों को पाकिस्तान छोड़ हिन्दुस्तान में आने पर मजबूर कर दिया। परन्तु आत्मीयता तो धीरे-धीरे साथ रहने पर बन रही थी। अन्यथा अंतर बना ही हुआ था। कृष्णा सोबती जब शान्ति मौसी के यहाँ अपनी दूसरी मौसी प्रकाश के साथ पहुँचती है तथा शान्ति मौसी द्वारा किए जा रहे खातिरदारी में फर्क को लेकर प्रश्न करती है तो जवाब में अरी पंजाबी गुजरातन भांजी, तुम और तुम्हारी शान्ती मौसी ऊधर की शरणार्थी हैं और प्रकाश बहन इस हिन्दुस्तानी गुजरात की सेठानी। फर्क कैसे न होगा। एक ही आसन है इस घर में, सो इनके लिए। इन्हीं की बदौलत सिर छुपाने को यह छत मिली है।[8] कृष्णा सोबती ने जगह-जगह विस्थापन एवं शरणार्थियों के कष्टों को अभिव्यक्त किया है।

इस उपन्यास में तीसरी सबसे प्रमुख समस्या का चित्रण हुआ है वह है कि आज़ादी के बाद पुरानी रियासतो का विलय होना शुरू हो गया था लेकिन अभी-भी कुछ रियासते अपने-आप को बचाने में लगी हुई थी। हम सभी जानते हैं कि ब्रिटिशों के आने से पहले, मुगलों के एवं अन्य लुटेरे शासकों के आने से पहले भारत में केवल राज परिवारों का ही शासन था। छोटी-छोटी रियासतों में देश बंटा हुआ था तथा कुछेक को छोड़कर किसी में भी अखण्ड-भारत की कल्पना भी नहीं थी। साथ-ही ये सभी रियासतें आपस में ही

लड़ा करते थे। लड़ाईयों का कारण भले ही छोटी-सी बात ही क्यों न हो। इसी कारण भारत तब कमज़ोर पड़ गया था। कृष्णा सोबती ने इस उपन्यास में आज़ादी के बाद रियासतों के विलय के बीच राजघरानों द्वारा सत्ता बचाने की कोशिशों के बारे में लिखती है। विशेषकर सिरोही रियासत के बारे में जहाँ एक छोटे से बच्चे को राजा बना दिया गया है ताकि उसके नाम से रियासत बच जाए। उसके आस-पास मित्र कम शत्रु ज्यादा है फिर भी रियासत बचायी जा रही है। देश आजादी के बाद आगे बढ़ रहा है – और ये रियासतें पिछले वक्तों को सँभालने की भरसक कोशिश कर रही हैं। पुराने मंसूबे। पुराने तरीके।[9] यह एक बहुत अच्छी बात हुई कि देश की आजादी के बाद सरकार ने राजसी शासन तथा जमींदारी व्यवस्था को पूरी तरहा से समाप्त कर दिया। सभी को यह विदित हैं कि आज़ादी से पहले पराधीन भारत में जमींदारी प्रथा तथा राजाओं के शासन ने समाज की आम जनता को सुरक्षा तथा लाभ कम, नुकसान ज्यादा पहुँचाया है। किसानों की हालत जमींदारों के वजह से खराब थी तथा आम जनता राजाओं के कायरपन से त्रस्त थी। बहुत कम ही कोई राजा अथवा जमींदार होंगे जिन्होंने जनता के लिए कुछ वास्तव में किया हो। किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए बहुत आवश्यक हो जाता है कि वहाँ की सरकार जनता के साथ मिलकर काम करे। साथ ही पुरानी रूढ़िवादी विचारधारा तथा ऐसी परम्पराओं को समाप्त करे जो कि जनता के, समाज के तथा देश के विकास में बाधा उत्पन्न करती हो।

कृष्णा सोबती ने अपने उपन्यास में कुछ अन्य ऐसी समस्याओं के बारे में भी लिखा है जिससे यह पता चलता है कि आजादी के बाद देश को उन्नत होने में इतना समय तथा परेशानियों का सामना क्यों करना पड़ा। दूसरी बात यह कि समस्याओं का चित्रण करना यह नहीं दिखाता कि देश में केवल हम नकारात्मकता देखी जा रही है बल्कि देश की ऐसी कोनसी सबसे बड़ी समस्या तथा चुनौतियाँ है उसे आगे बढ़ने नहीं देती तथा आज भी चुनौती बनकर सामने खड़ी है। कृष्णा सोबती तथा जुत्शी साहिब के बीच हुए बातचीत से तत्कालीन भारत की राजनीतिक तथा सामाजिक परिस्थिति की वास्तविकता सामने आ जाती है। सिरोही तथा श्रीनगर की राजनीतिक हलचल के अंतर पर जुत्शी साहिब कहते हैं – वहाँ शेख साहिब का दबाव है और यहाँ गोकुल भाई भट्ट का। यह बताइए कि दिल्ली किस कतर-ब्योंत पर लगी है। नेहरू और पटेल भी एक-दूसरे से राजनीति करने से बाज नहीं आते। अपनी-अपनी बात पर अड़े रहते हैं।[10] दरअसल राजनीति एक ऐसी पहेली बनकर रह गयी है कि जिसे आम लोग कभी भी समझ नहीं सके। नेताओं तथा शासकों ने हमेशा से ही सत्ता को हासिल करने के लिए जिस प्रकार की राजनीति की है तथा राजनीतिक षड्यंत्र किए है जनता को हमेशा से ही राजनीति से भय ही होता रहा है। दूसरी बात नेताओं की दूरदर्शिता एवं नेताओं की स्वार्थपरता दोनों के बारे में आम जनता को समझ कम ही थी। उस समय पटेल की देशहित की भावना तथा नेहरू के स्वार्थपरता को लोग दूर से समझ नहीं पा रहे थे। सबको लग रहा था कि दोनों नेता केवल आपसी राजनीतिक लड़ाई लड़ रहे है। देश की यह राजनीतिक अपारदर्शिता के कारण ही देश को अभी भी कई प्रकार के नुकसान झेलने पड़ रहे हैं।

इसी प्रकार उन्होंने एक और समस्या का चित्रण किया है कि देश चाहे कितना भी आधुनिक हो जाए समाज में जाति व्यवस्था तथा उससे जुड़ी कुछ रूढ़िवादी समस्याएँ जब तक बनी रहेंगी तब तक नई दिशा की ओर बढ़ना या नई योजनाओं का चलना मुश्किल है। जुत्शी साहिब को यह पूछने पर कि शिक्षा क्षेत्र में नई विकास योजनाएँ क्या है तो बदले में कृष्णा सोबती को यह उत्तर मिलता है – कैसे बताया जाए आपको। नई योजनाएँ कैसे चलेंगी। यहाँ का राजपूत इसलिए नहीं पढ़ता क्योंकि उसे राजपूती लगी हुई है।

बनिया इसलिए नहीं पढ़ता कि उसे दुकान लगी हुई है, और गरीब भील-गरासिया इसलिए नहीं पढ़ता कि उसे गरीबी लगी हुई है।[11] कृष्णा सोबती को यह बात पिछड़ापन लगती है। उन्हें दरअसल यह बात हर समय ही सताती रही है कि देश के आज़ाद हो जाने पर भी ब्राह्मण, राजपूत, क्षत्रिय, बनिया, हिन्दु, मुसलमान नाम से समाज आज भी बंटा हुआ है। आज भी इसी बंटवारे के कारण समाज में कोई बदलाव नहीं आया है। सब विकास तो चाहते हैं परन्तु केवल अपना। आरक्षण, राजनीति, जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रियतावाद आदि आदि चीज़ों के कारण प्रतिदिन ही न जाने कितने लड़ाईयाँ होती है। कभी सरकार और जनता में तो कभी दो अलग-अलग कट्टरपंथी गुटो में। आन्दोलन के नाम पर रेल की पटरी पर बैठकर रेल को रोकना, जुलुस निकालना, हड़ताल करना, बन्द के दौरान हिंसा करना, बिना सोचे-समझे किसी पर भी हमला कर देना, आदि समस्याओं ने सामाजिक विषमताओं तथा समस्याओं को समाप्त नहीं किया बल्कि उन्हें बढ़ाया एवं उलझाया ही है। साथ-ही-साथ आर्थिक क्षति भी पहुँचाई है। भले ही उपरोक्त जितनी सारी समस्याएँ है वे सब देश की स्वतंत्रता से लेकर बाद के कुछ समय तक की है लेकिन इन समस्याओं को अभी भी नहीं सुलझाया गया है। अभी भी देश 1947 के बंटवारे की आग में झुलस रहा है। लगातार उसे पड़ोसी देश द्वारा पैदा किए गए आतंकवाद की समस्या से लड़ना पड़ रहा है। अभी भी वहाँ से लगातार धार्मिक विरोध के कारण हिन्दुओं का पलायन हो रहा है तो वहाँ की बिगड़ी आर्थिक परिस्थिति के कारण भी कुछ लोग भारत आ जाते है ताकि पैसे कमाकर दो वक्त की रोटी जुटा सके। लेकिन इसी बीच उनके साथ-साथ असामाजिक तत्व भी देश में घुस रहे हैं तथा स्मगलीं, चोरी, डकैती तथा अन्य गम्भीर अपराध कर रहे हैं। यह सब कुछ देश की सुरक्षा एवं अस्मिता के लिए एक बड़ा खतरा है। साथ-ही-साथ जो लोग अलग-अलग देश से किसी भी कारण से पलायन करके दूसरे देशों में शरण ले रहे हैं उन देशों के लिए दोहरी चुनौति बनी हुई है। एक तो यह कि उन शरणार्थियों के प्रति मानवतावादी दृष्टिकोण से देखा जाए तो उन्हें देश में शरण देना चाहिए और उन्हें बसाना चाहिए। वही दूसरी चुनौति यह है कि यदि देश में पहले से ही संसाधनों की कमी हो, देश के मूल निवासियों को ही नौकरी तथा रोटी, कपड़ा, मकान जैसी बुनियादी सुविधाएँ भी देने में मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा हो ऐसे में वह कहाँ से अतिरिक्त शरणार्थी नागरिकों के लिए कुछ कर पाएगा। यह केवल उस देश पर आर्थिक बोझ के सिवाय कुछ नहीं दे सकता।

अंत में यह कहा जा सकता है कि कृष्णा सोबती ने अपने इस नए उपन्यास में उन सभी समस्याओं का चित्रण किया है जो देश की उन्नति में बाधा बन सकती है। समस्याओं का चित्रण कर उन्होंने वास्तव में आज के भारत में रहने वाले लोगों को चेताने चाहा है कि यदि यह समस्याएँ यू ही बनी रही और नित्य नये-नये रूप में समाज को भ्रमित करती रही तो देश का विकास होना मुश्किल होगा। राष्ट्रीय चेतना का मतलब केवल यह नहीं होता कि राष्ट्र की केवल प्रशंसा ही हो रचना में, राष्ट्रहित में बाधा उत्पन्न करने वाले समस्याओं से जनता का आगा कराना भी साहित्यकार का धर्म होता है जो कृष्णा सोबती ने की है।

संदर्भ :

1) गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान – कृष्णा सोबती, राजकमम पेपरबैक्स नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2017, पृ,सं –29।
2) वही, पृ,सं –29
3) वही, पृ,सं –121
4) वही, पृ,सं –43-44
5) वही, पृ,सं –82
6) वही, पृ,सं –43
7) वही, पृ,सं –131
8) वही, पृ,सं –129
9) वही, पृ,सं –218
10) वही, पृ,सं –48
11) वही, पृ,सं –48